भूमि प्राप्ति हेतु वराह अनुष्ठान प्रसंग

(अथ श्रीवराहमन्त्राराधनविधिः) श्रीसूत उवाच ॥ शृणुध्वं मुनयः सर्वे कथां पुण्यां पुरातनीम् ॥ वैवस्वते ऽन्तरे-पूर्वं कृते पुण्यतमे युगे ॥ १ ॥ नारायणाद्रौ देवेशं निवसन्तं क्षमापतिम् ॥ वराहरूपिणं देवं धरणी सखि

श्रीसूतजी बोले कि हे सब मुनि लोगो ! पुरानी पवित्र कथा को सुनिये कि पहले वैवस्वतमन्वन्तर में अत्यन्त पवित्र सतयुग में ॥ १ ॥ नारायण पर्वत पै

बसनेवाले पृथ्वीपति वराहरूपी देवेशजी को सखियों मे संयुत पृथ्वी ने प्रणाम करके लाल कमलदल के समान चौडे नेत्रोंवाले वराह जी से पूंछा ॥ २ । ३ ॥ पृथ्वी बोली कि हे देवेश ! किस मंत्र से आराधन करने पर आप प्रसन्न होंगे उसको मुझसे कहिये जोकि आपको सदैव प्रिय हो ॥ ४ ॥ और जपनेवालों को सब संपत्तियों के करनेवाले तथा पुत्र, पौत्रदायक और चक्रवर्ती राज्य को देनेवाले व सदैव कामियों को कामना देनेवाले मंत्र को कहिये ॥ ५ ॥ व हे मानद, वराहजी ! अन्त में जो मंत्र नियमी मनुष्यों को तुम्हारे स्थान की प्राप्ति देता है उसको मुझ मे प्रीति से कहिये ॥ ६ ॥ श्रीसूत जी बोले

भिर्वृता ॥ २ ॥ प्रणम्य परिपप्रच्छ रक्तपद्मायतेक्षणम् ॥ ३ ॥ धरण्युवाच ॥ आराध्यः केन मन्त्रेण भवान्प्रीतो भविष्य ति ॥ तं मे वद त्वं देवेश यः प्रियो भवतः सदा ॥ ४ ॥ जपतां सर्वसम्पत्तिकारकं पुत्रपौत्रदम् ॥ सार्वभौमत्वदं चैव का मिनां कामदं सदा ॥ ५ ॥ अन्ते यस्त्वत्पदप्राप्तिं ददाति नियमात्मनाम् ॥ एवंभूतं वद प्रीत्या मयि वाराह मान द ॥ ६ ॥ श्रीसूत उवाच ॥ इति पृष्टस्तया भूम्या प्राह प्रीतिस्मिताननः ॥ ७ ॥ श्रीवराह उवाच ॥ शृणु देवि परं गुह्यं सद्यः सम्पत्तिकारकम् ॥ भूमिदं पुत्रदं गोप्यमप्रकाश्यं कदाचन ॥ ८ ॥ किं च शुश्रूषवे वाच्यं भक्ताय नियतात्मने ॥ ९ ॥ ॐ नमः श्रीवराहाय धरण्युद्धरणाय च ॥ वह्निजायासमायुक्तः सदा जप्यो मुमुक्षुभिः ॥ १० ॥ अयं मन्त्रो धरादेवि सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥ ऋषिः संकर्षणः प्रोक्तो देवता त्वहमेव हि ॥ ११ ॥ छन्दः पंक्तिः समा

कि इस प्रकार उस पृथ्वी से पूंछे हुए प्रीति से मुसक्यान संयुत मुखवाले वराहजी ने कहा ॥ ७ ॥ श्रीवराह जी बोले कि हे देवि ! भूमिदायक, पुत्रदायक, गुप्तकरने योग्य तथा कभी न प्रकाश करने योग्य और शीघ्रही लक्ष्मी करनेवाले परम गुप्त मंत्र को सुनिये ॥ ८ ॥ जोकि भक्त व नियमी तथा सेवा करने वाले से कहने योग्य है ॥ ९ ॥ और मोक्ष की इच्छावाले मनुष्यों को "ॐनमः श्रीवराहाय धरण्युद्धारणाय स्वाहा" यह मंत्र सदैव जपना चाहिये ॥ १० ॥ हे धरादेवि ! यह मंत्र सब सिद्धियों को देनेवाला है और इसके ऋषि बलभद्र जी व देवता मैं हीं कहा गया हूं ॥ ११ ॥ और छन्दपंक्ति व श्रीबीज कहा गया है

उत्तम गुरु से उस मंत्र को पाकर चार लाख जपै ॥ १२ ॥ और शहद व घी से संयुत खीर को हवन करै इसके उपरान्त मैं मन की शुद्धि को देनेवाले ध्यान को कहता हू ॥ १३ ॥ कि शुद्ध बिल्लौर पर्वत के समान व लाल कमल के पत्ते के समान नेत्रोंवाले तथा सौम्य वराह मुख व चतुर्भुज और किरीट को धारण किये ॥ १४ ॥ व हे समुद्रवसने; वसुन्धरे ! श्रीवत्स को वक्षस्थल में धारण किये और चक्र, शंख व अभय को हाथरूपी कमल में लिये और बाईं जाँघ पै बैठी हुई तुमसे संयुत मुझको ध्यान करै ॥ १५ ॥ और लाल व पीले वसन को धारण किये तथा लाल भूषणों से भूषित और श्रीकूर्मजी की पीठ के बीच में स्थित

रूयाता श्रींबीजं समुदाहृतम् ॥ चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं सद्गुरोर्लब्धतन्मनुः ॥ १२ ॥ जुहुयात्पायसान्नं वै क्षौद्रसर्पिःसमन्वितम् ॥ अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि मनःशुद्धिप्रदायकम् ॥ १३ ॥ शुद्धस्फटिकशैलाभं रक्तपद्मदलेक्षणम् ॥ वराहवदनं सौम्यं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ॥ १४ ॥ श्रीवत्सवक्षसं चक्रशङ्खाभयकराम्बुजम् ॥ वामोरुस्थितया युक्तं त्वया मां सागराम्बरे ॥ १५ ॥ रक्तपीताम्बरधरं रक्ताभरणभूषितम् ॥ श्रीकूर्मपृष्ठमध्यस्थशेषमूर्त्यब्जसंस्थितम् ॥ १६ ॥ एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं सदा चाष्टोत्तरं शतम् ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति मोक्षं चान्ते व्रजेद्ध्रुवम् ॥ १७ ॥ प्रोक्तं मया ते धरणि यत्पृष्टोऽहं त्वयाऽमले ॥ अतः किं ते व्यवसितं ब्रूहि तद्विमलानने ॥ १८ ॥ (अथ श्रीवराहमन्त्रेण धर्मादीनां स्वाभीष्टसिद्धिवर्णनम्) श्रीसूत उवाच ॥ एतच्छ्रुत्वा ततो भूमिः पप्रच्छ पुनरेव तम् ॥ केनैवानुष्ठितं देव पुरा प्राप्तं फलं च किम् ॥ १९ ॥ इति पृष्टः पुनर्देवः श्रीवराहोऽब्रवीदिदम् ॥ पुरा कृतयुगे देवि धर्मोनाम मनुर्म

शेषजी की मूर्ति पै स्थित मुझको ध्यान करै ॥ १६ ॥ इस प्रकार ध्यान कर जो सदैव एक सौ आठ मंत्रों को जपता है वह सब कामनाओं को पाता है व अन्त में निश्चय कर मोक्ष को प्राप्त होता है ॥ १७ ॥ हे निर्मलमुखवाली, निर्मले, धरणि ! तुमने जो मुझसे पूछा उसको मैंने तुमसे वर्णन किया इसके बाद तुम्हारी क्या इच्छा है उसको कहिये ॥ १८ ॥ (अब श्रीवराहजी के मंत्र से धर्मादिकों के अपने मनोरथ की सिद्धि कही जाती है) श्रीसूतजी बोले कि इसको सुन कर तदनन्तर फिर पृथ्वी ने उन वराहजी से पूंछा कि हे देव ! किस ने यह अनुष्ठान किया है और क्या फल पाया है ॥ १९ ॥ इस प्रकार पूंछे हुए श्रीवराह

देवजी ने यह कहा कि हे देवि! पुरातन समय सतयुग में धर्मनामक बड़े भारी मनुजी ने ॥ २० ॥ ब्रह्मा से इस मंत्र को पाकर व इस पर्वत पै जप कर मुझको देख कर व वर पाकर मेरे स्थान को पाया है ॥ २१ ॥ व हे देवि! पुरातन समय दुर्वासाजी के शाप से इन्द्रजी स्वर्ग से अलग होगये और इस मंत्र से यहा मुझ को पूजकर फिर स्वर्ग को प्राप्त हुए ॥ २२ ॥ व हे भूमे! अन्य भी मुनि लोग इस मंत्रको जप कर उत्तम गतिको प्राप्त हुए हैं और सर्पों के राजा शेषजी इस मंत्रको कश्यपजी से पाकर ॥ २३ ॥ व श्वेतद्वीप में जपकर पृथ्वी को धारनेवाले हुए हैं इस कारण यहां सदैव पृथ्वी को चाहनेवाले मनुष्यों को सदैव यह मंत्र जपना

हान् ॥ २० ॥ ब्रह्मणोऽमुं मनुं लब्ध्वा जप्त्वास्मिन्धरणीधरे ॥ मां च दृष्ट्वा वरं लब्ध्वा प्राप्तोऽभून्मामकं पदम् ॥२१॥ इन्द्रो दुर्वाससः शापात्पुरा भ्रष्टस्त्रिविष्टपात् ॥ अनेनेष्ट्वाऽत्र मां देवि पुनः प्राप्तस्त्रिविष्टपम् ॥ २२ ॥ अन्येऽपि मुनयो भूमे जप्त्वा प्राप्ताः परां गतिम् ॥ अनन्तः पन्नगाधीशो ह्यमुं लब्ध्वाथ कश्यपात् ॥ २३ ॥ श्वेतद्वीपे जपित्वैव बभूव धरणीधरः ॥ तस्माज्जप्यः सदा चेह मनुष्यैश्च धरार्थिभिः ॥ २४ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे भूमिवाराहखण्डे श्रीवेङ्कटाचलमाहात्म्ये धरणीवराहसंवादे श्रीवराहमन्त्राराधनविध्यादिवर्णनंनाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

चाहिये ॥ २४ ॥